अथर्ववेद संहिता

(सरल हिन्दी भावार्थ सहित)

भाग-१

(काण्ड १ से १० तक)

सम्पादक

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

Scanned with CamScanner

४८०. युनक्त सीरा वि युगा तनोत कृते योनौ वपतेह बीजम्।
विराजः श्नुष्टिः सभरा असन्नो नेदीय इत् सृण्यः पक्वमा यवन् ॥२ ॥

(हे कृषको !) हलों को प्रयुक्त करो, युगों को फैलाओ। इस प्रकार तैयार उत्पादक क्षेत्र में बीजों का वपन करो। हमारे लिए भरपूर उपज हो। वे परिपक्व होकर काटने वाले उपकरणों के माध्यम से हमारे निकट आएँ ॥२।

[जैसे कृषि की उपज पकने पर ही प्रयुक्त करने योग्य होती है, उसी प्रकार साधनाएँ भी परिपक्व होने पर ही प्रयुक्त की जाने योग्य होती हैं।]

४८१. लाङ्गलं पवीरवत् सुशीमं सोमसत्सरु।
उदिद् वपतु गामविं प्रस्थावद् रथवाहनं पीबरीं च प्रफर्व्यम् ॥३ ॥

श्रेष्ठ फाल से युक्त (अथवा वज्र की तरह कठोर), सुगमता से चलने वाला, सोम (अन्न या दिव्य सोम) की प्रक्रिया को गुप्त रीति से सम्पादित करने वाला हल (हमें) पुष्ट 'गौ' (गाय, भूमि या इन्द्रियाँ), 'अवि' (भेड़ या रक्षण सामर्थ्य), शीघ्र चलने वाले रथवाहन तथा नारी (अथवा चेतन शक्ति) प्रदान करे ॥३ ॥

४८२. इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषाभि रक्षतु।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् ॥४ ॥

इन्द्रदेव कृषि योग्य भूमि को सँभालें। पूषादेव उसकी देख-भाल करें, तब वह (धरित्री) श्रेष्ठ धान्य तथा जल से परिपूर्ण होकर हमारे लिए धान्य आदि का दोहन करे ॥४ ॥

४८३. शुनं सुफाला वि तुदन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अनु यन्तु वाहान्।
शुनासीरा हविषा तोशमाना सुपिप्पला ओषधीः कर्तमस्मै ॥५ ॥

हल के नीचे लगी हुई, लोहे से विनिर्मित श्रेष्ठ 'फालें' खेत को भली-प्रकार से जोतें और किसान लोग बैलों के पीछे-पीछे आराम से जाएँ। हे वायु और सूर्य देवो ! आप दोनों हविष्य से प्रसन्न होकर, पृथ्वी को जल से सींचकर इन ओषधियों को श्रेष्ठ फलों से युक्त करें ॥५ ॥

४८४. शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम्। शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गय ॥

कृषक हर्षित होकर खेत को जोतें, बैल उन्हें सुख प्रदान करें और हल सुखपूर्वक कृषि कार्य सम्पन्न करें। रस्सियाँ सुखपूर्वक बाँधें। हे शुनः देवता ! आप चाबुक को सुख के लिए ही चलाएँ ॥६ ॥

४८५. शुनासीरेह स्म मे जुषेथाम्। यद् दिवि चक्रथुः पयस्तेनेमामुप सिञ्चतम् ॥७ ।।

हे वायु और सूर्यदेव ! आप हमारी हवि का सेवन करें। आकाश में निवास करने वाले जल देवता वर्षा के द्वारा इस भूमि को सिंचित करें ॥७ ॥

४८६. सीते वन्दामहे त्वार्वाची सुभगे भव। यथा नः सुमना असो यथा नः सुफला भुवः

हे सीते (जुती हुई भूमि) ! हम आपको प्रणाम करते हैं। हे ऐश्वर्यशालिनी भूमि ! आप हमारे लिए श्रेष्ठ मन वाली तथा श्रेष्ठ फल प्रदान करने वाली होकर हमारे अनुकूल रहें ॥८ ॥

४८७. घृतेन सीता मधुना समक्ता विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः।
सा नः सीते पयसाभ्याववृत्स्वोर्जस्वती घृतवत् पिन्वमाना ॥९ ॥

घृत (जल) और शहद द्वारा भली प्रकार अभिषिंचित हे सीते (जुती भूमि) !आप देवगणों तथा मरुतों द्वारा स्वीकृत होकर घृत से सिंचित होकर (घृतयुक्त) पोषक रस (जल- दुग्धादि) के साथ हमारी ओर उन्मुख हों ॥९ ॥

Scanned with CamScanner

[७० - सरस्वती सूक्त (६८)]

[ऋषि- शन्ताति । देवता- सरस्वती । छन्द- अनुष्टुप्, २ त्रिष्टुप् ।]

१८९९. सरस्वति व्रतेषु ते दिव्येषु देवि धामसु । जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि ररास्व नः ।

हे सरस्वतीदेवि ! आपके दिव्य व्रतों और धामों के लिए अर्पित आहुतियों को आप ग्रहण करें । आप हमें पुत्र - पौत्रादि रूप प्रजा प्रदान करें ॥१ ॥

१९००. इदं ते हव्यं घृतवत् सरस्वतीदं पितृणां हविरास्यं१ यत् ।
इमानि त उदिता शंतमानि तेभिर्वयं मधुमन्तः स्याम ॥२ ॥

हे सरस्वतीदेवि ! आपके लिए हमने घृतयुक्त हवि अर्पित की है, उसे आप पितरों तक पहुँचने के लिए प्रेरित करें । जो हवि हम आपके लिए अर्पित करते हैं, उसके प्रभाव से हम मधुरता युक्त अन्न से सम्पन्न हों ॥२ ॥

[७१- सरस्वती सूक्त (६८)]

[ऋषि- शन्ताति । देवता- सरस्वती । छन्द- गायत्री ।]

१९०१. शिवा नः शंतमा भव सुमृडीका सरस्वति । मा ते युयोम संदृशः ॥१ ॥

हे वाग्देवी सरस्वति ! आप समस्त सुख देने वाली हैं । आप हमें रोगों से पूर्णरूपेण मुक्त करके हमारा कल्याण करें । हे देवि ! हम आपके वास्तविक स्वरूप का दर्शन करते रहें ॥१ ॥

[७२ - सुख सूक्त (६९)]

[ऋषि- शन्ताति । देवता- सुख । छन्द- पथ्या पङ्क्ति ।]

१९०२. शं नो वातो वातु शं नस्तपतु सूर्यः ।
अहानि शं भवन्तु नः शं रात्री प्रति धीयतां शमुषा नो व्युच्छतु ॥१ ॥

हे वायुदेव ! आप हमारे लिए सुखदायकरूप से प्रवाहित हों एवं सुखपूर्वक प्रेरित करने वाले सूर्यदेवता सुख- स्वास्थ्यवर्द्धक ताप ही प्रदान करें । हमारा उषाकाल, दिन एवं रात्रि में सब प्रकार कल्याण हो ॥१ ॥

[७३ - शत्रुदमन सूक्त (७०)]

[ऋषि- अथर्वा । देवता- श्येन । छन्द- त्रिष्टुप्, २ अतिजगतीगर्भा जगती, ३ पुरः ककुम्मती अनुष्टुप्, ४-५ अनुष्टुप् ।]

१९०३. यत् किं चासौ मनसा यच्च वाचा यज्ञैर्जुहोति हविषा यजुषा ।
तन्मृत्युना निर्ऋतिः संविदाना पुरा सत्यादाहुतिं हन्त्वस्य ॥१ ॥

जो शत्रु हमें नष्ट करने के संकल्पसहित हवि और मन्त्रों से अभिचार कर्म कर रहा हो, उसके मन वाणी और देह से किये गये कर्म के फलित होने के पहले ही, हे निर्ऋतिदेव ! आप मृत्यु के सहयोग से उसे नष्ट करें ॥१ ॥

१९०४. यातुधाना निर्ऋतिरादु रक्षस्ते अस्य घ्नन्त्वनृतेन सत्यम् ।
इन्द्रेषिता देवा आज्यमस्य मथ्नन्तु मा तत् सं पादि यदसौ जुहोति ॥२ ॥

यातुधान, राक्षस और निर्ऋतिदेव, हमारे शत्रु द्वारा किये जा रहे अभिचार कर्म को विपरीत क्रिया द्वारा नष्ट कर दें । इन्द्रदेव द्वारा प्रेरित देवता शत्रु द्वारा हवन में प्रयुक्त किये जाने वाले घृत को नष्ट कर दें ॥२ ॥

Scanned with CamScanner